साप्ताहिक
Live not just breaTHE

MPHIN/2015/63220
MP/IDC1528/16-18

दि कार्मिक पोस्ट

वर्ष : 8, अंक : 7 (प्रति बुधवार), इन्दौर, 5 अक्टूबर 2022 से 12 अक्टूबर 2022 पेज : 8 कीमत : 3 रुपये

23 फीसदी उत्सर्जन के लिए जिम्मेवार हैं दुनिया के एक फीसदी लोग...

मुंबई। यदि तापमान में होती वृद्धि को 1.5 डिग्री सेल्सियस पर सीमित रखना है तो उसके लिए अब से 2050 तक प्रति व्यक्ति वार्षिक उत्सर्जन को 1.9 टन पर सीमित करना होगा इसमें कोई शक नहीं की धरती पर मौजूद हर इंसान जलवायु में आते बदलावों के लिए जिम्मेवार है। लेकिन सभी इंसान समान रूप इस बदलती जलवायु के लिए जिम्मेवार नहीं हैं। वैश्विक स्तर पर लोगों द्वारा उत्सर्जित हो रही ग्रीनहाउस गैसों के बीच का यह अंतर काफी बड़ा है।

इस पर किए गए एक नए अध्ययन से पता चला है कि 1990 के बाद से वैश्विक स्तर पर हुए कुल उत्सर्जन के 23 फीसदी हिस्से के लिए दुनिया के एक फीसदी साधन संपन्न लोग जिम्मेवार हैं। वहीं दुनिया की सबसे पिछड़ी 50 फीसदी आबादी की बात करें तो वो इस उत्सर्जन के केवल 16 फीसदी हिस्से के लिए जिम्मेवार हैं। पिछले कुछ दशकों में जलवायु परिवर्तन का मुद्दा गर्माता जा रहा है। इस मुद्दे पर जोरों से चर्चाएं हो रही हैं, लेकिन इसके बावजूद उस पिछड़े और कमजोर तबके की व्यथा अभी भी जस की तस है। देखा जाए तो यह पिछड़ा और कमजोर वर्ग इस उत्सर्जन के बहुत छोटे हिस्से के लिए जिम्मेवार है, लेकिन वो इससे सबसे ज्यादा पीड़ित है। ऐसे में जलवायु को लेकर न्याय और समानता का मुद्दा अहम है। देखा जाए तो दुनिया की शीर्ष एक फीसदी आबादी द्वारा किए जा रहे इस उत्सर्जन के एक बड़े हिस्से के लिए खपत के बजाय उनके द्वारा किया जा रहा निवेश जिम्मेवार है। वहीं यदि वर्ष 2019 में हुए कुल उत्सर्जन को देखें तो दुनिया की शीर्ष 10 फीसदी आबादी ने करीब 48 फीसदी उत्सर्जन किया था। वहीं दुनिया की निचली 50 फीसदी आबादी वैश्विक उत्सर्जन के केवल 12 फीसदी हिस्से के लिए जिम्मेवार थी। जर्नल नेचर सस्टेनेबिलिटी में प्रकाशित इस अध्ययन के मुताबिक 1990 के बाद से दुनिया की शीर्ष एक फीसदी आबादी के प्रति व्यक्ति उत्सर्जन में वृद्धि हुई है। वहीं दूसरी तरफ अमीर देशों में निम्न और मध्यम आय वर्ग द्वारा किए जा रहे उत्सर्जन में गिरावट दर्ज की गई है। 1990 की स्थिति के विपरीत, व्यक्तिगत उत्सर्जन में वैश्विक असमानता का 63 फीसदी अब देशों के बजाय देशों के भीतर कम और उच्च उत्सर्जक के बीच अंतर के कारण है। मतलब की यह जो खाई है वो अब सिर्फ देशों के बीच ही सीमित नहीं है देशों के भीतर भी यह गहराती जा रही है। देश के भीतर भी एक ऐसा वर्ग है जो बहुत ज्यादा उत्सर्जन कर रहा है जबकि दूसरी तरफ उसका खामियाजा वो वर्ग झेल रहा है जो इसके लिए जिम्मेवार नहीं है। जलवायु परिवर्तन और आर्थिक असमानताएं दोनों ही हमारे समय की सबसे बड़ी चुनौतियों में से हैं, और वो आपस में एक दूसरे से जुड़ी हैं। जहां जलवायु परिवर्तन को रोकने में विफलता से देशों के भीतर और देशों के बीच असमानता बढ़ सकती है। वहीं दूसरी तरफ देशों के भीतर मौजूद आर्थिक असमानताएं जलवायु नीतियों के कार्यान्वयन को धीमा कर देती हैं। सिर्फ देशों के बीच ही नहीं भीतर भी गहरा रही है असमानता की खाई रिसर्च से पता चला है कि 2019 में, जहां उप-सहारा अफ्रीका में रहने वाले लोगों ने औसतन 1.6 टन सीओ2 के बराबर उत्सर्जन किया था। वहीं उत्तरी अमेरिका में, प्रति व्यक्ति उत्सर्जन औसत से 10 गुना ज्यादा था, जबकि महाद्वीप के शीर्ष 10 फीसदी लोग करीब 70 टन उत्सर्जन कर रहे हैं। यदि वैश्विक स्तर पर देखें तो सबसे पिछड़ी 50 फीसदी आबादी औसतन प्रति वर्ष 1.4 टन सीओ2 के बराबर उत्सर्जन कर रही है, जिसकी वैश्विक उत्सर्जन में हिस्सेदारी करीब 11.5 फीसदी है। वहीं मध्य वर्ग यानी 40 फीसदी आबादी प्रति व्यक्ति हर वर्ष 6.1 टन उत्सर्जन कर रही है, जो कुल उत्सर्जन के 40.5 फीसदी हिस्से के लिए जिम्मेवार है। वहीं सबसे अमीर दुनिया की 10 फीसदी आबादी प्रति व्यक्ति हर वर्ष औसतन 28.7 टन उत्सर्जन कर रही है जोकि कुल वैश्विक उत्सर्जन का करीब 48 फीसदी है। वहीं यदि सबसे अमीर एक फीसदी आबादी की बात करें तो वो प्रति व्यक्ति औसतन हर वर्ष 101 टन सीओ2 के बराबर उत्सर्जन कर रहा है, जो कुल वैश्विक उत्सर्जन का करीब 16.9 फीसदी के लिए जिम्मेवार है। ऐसे में देखा जाए तो वैश्विक असमानता की यह खाई बहुत गहरी है जिसे भरना जरुरी है। वैश्विक स्तर पर देखें तो 2019 में एक औसत व्यक्ति द्वारा किया जा रहा उत्सर्जन करीब 6 टन कार्बन डाइऑक्साइड के बराबर पहुंच गया है। हालांकि यदि तापमान में होती वृद्धि को 1.5 डिग्री सेल्सियस पर सीमित रखना है तो उसके लिए अब से 2050 तक प्रति व्यक्ति वार्षिक उत्सर्जन को 1.9 टन कार्बन डाइऑक्साइड पर सीमित करना होगा। लेकिन यह जितना दिखता है उतना आसान नहीं है।

विकास के नाम पर पर्यावरण का विनाश, अर्बन नक्सल और माओवादी के नाम पर मारे जायेंगे पर्यावरण कार्यकर्ता?

नई दिल्ली। *ग्लोबल विटनेस नामक संस्था द्वारा प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार दुनिया में औसतन हरेक दूसरे दिन एक पर्यावरण कार्यकर्ता की हत्या कर दी जाती है। पर्यावरण संरक्षण और प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करने वाले इन पर्यावरण कार्यकर्ताओं की हत्या सरकार, पुलिस, प्रशासन, सुरक्षा बल, शातिर अपराधी या संगठित अपराधी गिरोह के सदस्य भी करते हैं। अपने जल, जंगल, जमीन या दूसरे प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करते लोगों की निर्मम हत्या जंगलों के बीच या आदिवासियों के क्षेत्र में खनन, जंगलों की कटाई, बांधों या फिर कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना का विरोध करने के कारण की जाती है। यह एक असमानता का उदाहरण भी है, जहां शांतिपूर्ण ढंग से विरोध करते लोगों की हत्या सशस्त्र पूंजीवादी व्यवस्था करती है। अफ़सोस यह है कि ऐसी हत्याओं वाले देश में हमारा देश हमेशा पहले 10 देशों में शामिल रहता है। हमारे देश में पर्यावरण कार्यकर्ताओं का भविष्य पहले से भी अधिक खतरनाक होने वाला है क्योंकि हाल में ही स्वयं प्रधानमंत्री मोदी ने सार्वजनिक तौर पर पर्यावरण कार्यकर्ताओं को अर्बन नक्सल करार दिया है। जाहिर है कि दुनिया को पहली बार यह खबर हुई होगी कि चिपको आन्दोलन, साइलेंट वैली बचाओं आन्दोलन, नर्मदा बचाओं आन्दोलन या राजस्थान में खेजड़ी के पेड़ों को बचाने के आन्दोलन में शामिल लाखों पर्यावरण संरक्षक आजादी के अमृत महोत्सव काल में प्रधानमंत्री द्वारा अर्बन नक्सल करार दिए गए। ग्लोबल विटनेस की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2012 से 2021 के दशक में दुनिया में कम से कम 1738 पर्यावरण कार्यकर्ताओं की हत्या की गयी। इस रिपोर्ट की भूमिका हमारे देश की प्रसिद्ध पर्यावरण कार्यकर्ता, वंदना शिवा, ने लिखा है। उन्होंने लिखा है कि पर्यावरण कार्यकर्ताओं से उनका एक लंबा नाता रहा है और वे उनके खतरे को अच्छी तरह से जानती हैं। रिपोर्ट में साफ तौर पर कहा गया है, वास्तविक मौतें इससे बहुत अधिक हैं, पर इतने पर्यावरण कार्यकर्ताओं की हत्या की खबरें एडिया में प्रकाशित की गईं थीं। पर्यावरण कार्यकर्ताओं की हत्या के सन्दर्भ में सबसे खतरनाक दक्षिण अमेरिकी देश हैं, जहां कुल हत्याओं में से दो-तिहाई से भी अधिक की जाती हैं। एशिया में सबसे खतरनाक देश फिलीपींस और भारत हैं। ऐसी हत्याओं के सन्दर्भ में फिलीपींस सबसे खतरनाक पांच देशों में और भारत सबसे खतरनाक 10 देशों में हरेक वर्ष शामिल रहता है।*

जलवायु परिवर्तन एवं विकास के समय में कार्बन न्याय होना बहुत जरूरी

मुंबई। जलवायु परिवर्तन एक भूमण्डलीय समस्या है इसलिए अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर इस पर चर्चा होती रहती है, और उसमें राष्ट्रों के प्रतिनिधि समझौतें और निर्णय लेते है। विश्व के धनवान देश, दुनिया के अधिकांश जीवाश्म ईंधन (पेट्रोल, डीजल आदि) के कार्बन उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार हैं। तर्क भी दिए जाते हैं कि इसके लिए सुधारात्मक कदम उठाने की जिम्मेदारी मूलतः विकसित राष्ट्रों की ही हो।

जलवायु परिवर्तन का मुद्दा विगत दशकों में अत्यधिक अंतर्राष्ट्रीय बनता गया तथा थके हारे, निर्धन और स्थानीय समुदाय इसके विमर्श से बाहर रह गए। यहां, मेरा आशय कई देशों के उन गरीब एवं निर्बल लोगों की दुर्दशा पर है, जिन्होंने वर्षों में जीवाश्म ईंधनीय कार्बन (फोसिल फ्यूल कार्बन, एफएफसी) लगभग न के बराबर उत्सर्जित किया, लेकिन वे सबसे ज्यादा पीड़ित हैं। यह विशेष रूप से हिमालय के लोगों पर लागू होता है, जहां वर्ष 2020 में भी प्रति व्यक्ति सीओ2 उत्सर्जन वैश्विक औसत 4.79 टन प्रति वर्ष (क्लाइमेट वॉच, 2020) की तुलना में 1 टन प्रति वर्ष से कम है। यू.एस.ए. सहित कई देश प्रतिवर्ष 15 टन कार्बन का उत्सर्जन करते हैं। एक गरीब व्यक्ति कार्बन का लगभग गैर-उत्सर्जक या न्यूनतम उत्सर्जक है, परन्तु वह जलवायु परिवर्तन से अत्याधिक त्रस्त है। यह ज्ञातव्य है कि गरीब लोगों ने एफएफसी के गैर-उत्सर्जक या बहुत कम उत्सर्जक रहकर, ग्लोबल वार्मिंग को एक सीमा के भीतर रखने में योगदान दिया है। परन्तु समाज के कमजोर एवं निर्बल लोगों के इस योगदान का अमीर और सक्षम लोगों ने कभी सन्दर्भ नहीं लिया न ही उसके लिए कृतज्ञता का शिष्टाचार निभाया। आमतौर पर ये थके हारे लोग जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को झेलने में असक्षम होते हैं। उदाहरण के तौर पर इनमें शामिल हैं- एक मोची जो सड़क के किनारे जमीन पर बैठकर हमारे जूतों की मरम्मत करता है और वाहनों के प्रदूषकों से सबसे अधिक प्रभावित होता है; हिमालय में पिघलते ग्लेशियरों के समीप रहने वाली महिलाएं जिनको रोज पानी लाना होता है, एक छोटा किसान, जिसकी नदी के पास की कृषि भूमि बार-बार भूस्खलन से नष्ट हो जाती है; और एक फेरीवाला जो हर दिन पैदल चलकर हमारे लिए फल लाता है जबकि दुनिया ने उसके लिए कोई जगह नहीं छोड़ी है] जहां वह अधिकार स्वरुप अपना ठेला खड़ा कर सके। वर्षों से बढ़ती अनिश्चितताओं के बावजूद ये लोग जीवाश्म ईंधन (फोसिल फ्यूल जैसे पेट्रोल) का उपभोग किए बिना जीवित रहने के लिए संघर्ष रत हैं। सच है, गरीब आनुवंशिक रूप से अमीरों से अलग नहीं हैं, उन्होंने एफएफसी का उत्सर्जन इसलिए नहीं किया क्योंकि वे इसे वहन नहीं कर सकते थे, और वे भी एफएफसी का उत्सर्जन करेंगे जब उनके पास पैसे होंगे। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि वे गरीबी और जलवायु परिवर्तन -प्रेरित तूफान और बाढ़ दोनों से अति पीड़ित नहीं हैं और उनके प्रति हमारा कोई उत्तरदायित्व नहीं है। हमें उनके प्रति संवेदनशील और दयालु होना चाहिए। वे न केवल एफएफसी के गैर-उत्सर्जक हैं, उन्हें इसका भी संज्ञान नहीं है कि ऐसा करके वे हमारे इकोसिस्टमस को बचाए हुए हैं। सभी कार्बन सीक्वेस्ट्रेशन भुगतान के लिए पात्र नहीं हैं, किसी को कार्बन क्रेडिट तभी मिलता है, जब वह 卐नए कार्बन सीक्वेस्ट्रेशन卐 में योगदान देता है, पूर्व से चलते आ रहे कार्बन बचत प्रावधानों को कार्बन भुगतान के लिए योग्य नहीं माना जाता हैं। कार्बन सीक्वेस्ट्रेशन के प्रयास भूमंडलीय स्तर पर कार्बन उत्सर्जन को कम करना होता है। हिमालय में एक वन उपयोगकर्ता समूह जो दशकों से अपने वनों को बनाए रखता है, उसे कार्बन क्रेडिट नहीं दिया जाता है, हालांकि, जिन्होंने वनों को पूर्व में नष्ट कर दिया और अब कार्बन स्टॉक में सुधार करते हैं तो उन्हें कार्बन क्रेडिट मिलता है। इसमें अभाव की मज़बूरी में किये गए कार्बन उत्सर्जन के लिए कोई रियायत भी नहीं है। हिमालय में महिलाओं ने घास, लकड़ी आदि के लिए वनों का दोहन एक सीमा के अंदर रखकर कार्बन बचत में योगदान दिया है (डेनियलसन एवं अन्य 2011)। इसके विपरीत आधुनिक मशीनों की सहायता से हम आज एक दिन में सड़को के निर्माण आदि के लिए एक दिन में सैकड़ो पेड़ को काट देते हैं। हमारे द्वारा इस प्रकार से काटे गए पेड़ों के बराबर जीवन निर्वाह हेतु घास लकड़ी काटने में ग्रामीण महिलाओ को कई दशक लगते हैं। इन लोगों को खाना पकाने के लिए स्वच्छ ऊर्जा प्राप्त करने का पूरा अधिकार होना चाहिए (सिंह और सिंह, 1992)। जलाऊ लकड़ी के लिए पेड़ों की कटाई को रोकने के कारण जंगलों में बढ़े हुए कार्बन सेक्वेस्ट्रेशन द्वारा उन्हें रसोई गैस के नियमित समर्थन को उचित ठहराया जा सकता है। शिक्षित, सुसंस्कृत और सक्षम लोगों को गरीबों एवं निर्बल लोगों की समस्याओं के प्रति विचारशील और दयालु (कम्पेशनट) होना चाहिए, और कार्बन न्याय के लिए योगदान देना चाहिए। जो आर्थिक रूप से सफल नहीं हो सके, उनके प्रति अनुकम्पा विकास का अंग होना चाहिए। कुल मिलाकर, एक देश के भीतर एफएफसी उत्सर्जन से बचने वाली सभी प्रथाओं को मान्यता दी जानी चाहिए और भुगतान किया जाना चाहिए। हम आम आदमियो के पास कार्बन बचत हेतु भुगतान के लिए पर्याप्त धन नहीं हैं, लेकिन हम कुछ लोगों के दुश्वारियों को दूर करने के लिए कुछ न कुछ धन एकत्र कर सकते हैं और सहायता दे सकते हैं ताकि वे लोग अपनी आय अर्जित करते हुए गैर-उत्सर्जक बने रहें। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि कार्बन न्याय को गरीबी में कमी के साथ एकीकृत करके, हम लोगों को जलवायु परिवर्तन संकट और इसके संभावित प्रभाव के बारे में व्यापक रूप से जागरूक कर सकते हैं।

यह जलवायु परिवर्तन संकट को विकास की मुख्य धारा में लाने में मदद करेगा, जो प्रभावी अनुकूलन रणनीतियों को लेने के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। जलवायु परिवर्तन पर होने वाले अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों और अनजान निर्बल लोगों की समस्याओं के बीच की दूरी को कम करना होगा। बेरोजगारी आज सतत विकास के लिए मुख्य समस्या है। गरीबों के कारण, कई सेवाएं, कौशल और नौकरियां अभी भी मौजूद हैं और वे अक्सर स्थिर विकास को बढ़ावा देते हैं। उदाहरण के लिए, एक मोची ने एक कौशल विकसित किया है, यदि हम इसकी आर्थिकी में योगदान करने में विफल रहते हैं तो यह कौशल विलुप्त हो सकता है। यह आवश्यक है कि उस पेशे से मोची को ठीक से जीने के लिए पर्याप्त पैसा नहीं मिलता रहे। उन्हें जूते को सिलने की मशीन देकर हम शहरी क्षेत्रों की अनिश्चित स्थिति में उनकी कमाई को सम्मान के साथ जीने लायक बना सकते हैं। फिर, जूतों की मरम्मत करके एक मोची कूड़े के ढेर को कम करता है। कई लोगों को मरम्मत और बनावट कार्यों जैसे कपड़े की मरम्मत, खाना पकाने के चूल्हे, साइकिल बनाना, काष्ठकला, बागवानी एवं अन्य निर्माण कार्य आदि में लगाए रख कर नियोजित किया जाता है, जो कि एक शहरी व्यवस्था में अहम हिस्सा है। यह सब न केवल कार्बन बचत के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण हैं बल्कि रोजगार और कौशल विकास के स्रोत के रूप में भी इसका महत्त्व होगा। अर्थव्यवस्था को रैखिक के बजाय चक्राकार होना चाहिए, और इसमें न केवल रिसायकल बल्कि सतत विकास के लिए वस्तुओ की मरम्मत और पुन-उपयोग भी शामिल है। एक लकड़ी की मेज न केवल फर्नीचर का एक टुकड़ा है बल्कि कार्बन स्टॉक भी है। उस कार्बन स्टॉक को वायुमंडल से अलग रखने के लिए इसका उपयोग एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक किया जा सकता है।

पर्यावरण संरक्षण के लिए भरतपुर की संस्था की पहल, 2 साल में मुफ्त बांटे 60 हजार कपड़े के थैले

भरतपुर. राजस्थान हाईकोर्ट के द्वारा प्लास्टिक बैग को प्रतिबंधित करने के बावजूद भी व्यापारी व आम जन इसका जमकर इस्तेमाल कर रहे हैं. इसके विपरीत पर्यावरण संरक्षण के प्रति भरतपुर की एक संस्था के द्वारा पहल करते हुए कपड़े के थैले बनाकर लोगों को निशुल्क वितरण किया जा रहा है. साथ ही लोगों को प्लास्टिक बैग का उपयोग नहीं करने के लिए जागरूक किया जा रहा है. इसका मुख्य उद्देश्य भरतपुर को पॉलीथिन मुक्त करना है. स्वास्थ्य मंदिर संस्था के पदाधिकारी दिगंबर सिंह ने बताया कि कोरोना काल ने देखा कि घरेलू सामग्री में प्रयोग किए जाने वाले प्लास्टिक बैग को लोग घर के बाहर फेंक देते या जला देते थे, इससे एक तरफ जहां पर्यावरण प्रदूषित हुआ. वहीं, इस प्लास्टिक बैग को आवारा जानवर खा रहे थे. कई जगहों पर देखा गया की प्लास्टिक बैग को खाने से आवारा पशुओं की मौत हो गई. यह देख कर मन में विचार आया कि क्यों न संस्था के द्वारा कपड़े के थैले बनवा कर उसे लोगों में निश्शुल्क बांटे जाएं जिससे पर्यावरण प्रदूषण से बचे, और जानवरों के जीवन को भी बचाया जाये.

पर्यावरण और जलवायु के लिए खतरा बन गई है बिटकॉइन, खनन से बढ़ रहा है उत्सर्जन

न्यूयार्क। क्या आप जानते हैं कि क्रिप्टोकरेंसी बिटकॉइन पर्यावरण और जलवायु के दृष्टिकोण से काफी खतरनाक है। हाल ही में इसपर की गई एक नई रिसर्च से पता चला है कि 2021 में हर बिटकॉइन के खनन से जलवायु को 11,314 अमेरिकी डॉलर के बराबर क्षति हुई थी।

वहीं शोध में इस बात की भी पुष्टि की गई है कि इसके बिटकॉइन उद्योग में परिपक्वता आने के साथ इसकी प्रति कॉइन जलवायु क्षति घटने की बजाय बढ़ रही है, जोकि चिंता का विषय है। गौरतलब है कि 2016 में जहां प्रति बिटकॉइन माइनिंग से 0.9 टन कार्बन डाइऑक्साइड के बराबर उत्सर्जन हुआ था जो 2021 में बढ़कर 113 टन पर पहुंच गया था। इस तरह देखा जाए तो इस अवधि में बिटकॉइन माइनिंग से होने वाले उत्सर्जन में करीब 125 गुना वृद्धि हुई है। इस बारे में न्यू मैक्सिको विश्वविद्यालय के एसोसिएट प्रोफेसर और अध्ययन से जुड़े शोधकर्ता बेंजामिन ए जोन्स का कहना है कि, हमें इस बात के कोई सबूत नहीं मिले हैं कि बिटकॉइन माइनिंग समय के साथ ज्यादा सस्टेनेबल होता जा रहा है। वहीं यदि 2016 से 2021 के बीच जितने बिटकॉइन की माइनिंग की गई है उसके कुल प्रभाव की गणना की जाए तो वो करीब 97,707 करोड़ रुपए (1,200 करोड़ डॉलर) के बराबर बैठती है। वहीं 2021 खनन में किए गए कुल बिटकॉइंस से होने वाली औसत वैश्विक क्षति की बात करें तो वो करीब 30,126 करोड़ रुपए (370 करोड़ डॉलर) के बराबर है। देखा जाए तो बिटकॉइन के खनन से जलवायु पर पड़ने वाला प्रभाव गोल्ड माइनिंग से ज्यादा है। वहीं इसके कारण जलवायु को होने वाले नुकसान की तुलना बीफ, प्राकृतिक गैस और कच्चे तेल से की जा सकती है। जर्नल साइंटिफिक रिपोर्टस में प्रकाशित इस अध्ययन से पता चला है कि पिछले पांच वर्षों में क्रिप्टोकरेंसी बिटकॉइन के उत्पादन का पर्यावरणीय नुकसान उसके बाजार मूल्य का औसतन 35 फीसदी है। हालांकि 2020 में यह नुकसान अपने चरम पर 82 फीसदी तक पहुंच गया था। देखा जाए तो इसकी तुलना कोयले से की जा सकती है जिसका पर्यावरण पर पड़ने वाला दबाव उसके बाजार मूल्य का करीब 95 फीसदी है। वहीं मई 2020 में यह नुकसान अपने चरम पर सिक्के की कीमत के करीब 156 फीसदी के बराबर पहुंच गया था। वहीं यदि बीफ की बात करें तो उससे पर्यावरण और जलवायु पर पड़ने वाला प्रभाव करीब 33 फीसदी है। वहीं प्राकृतिक गैस के मामले में यह आंकड़ा करीब 46 फीसदी है। वहीं गोल्ड माइनिंग का जलवायु प्रभाव उसके बाजार मूल्य का करीब 4 फीसदी है।

बिटकॉइन एक तरह की क्रिप्टोकरेंसी होती है। देखा जाए तो पिछले कुछ सालों में लोगों की इसके प्रति दिलचस्पी काफी तेजी से बढ़ी है। देशों की पारम्परिक मुद्रा को उस देश की सरकार, बैंक आदि नियंत्रित करते हैं, पर वहीं दूसरी तरफ क्रिप्टोकरेंसी के साथ ऐसा नहीं होता है। बिटकॉइन के लेनदेन का प्रबंधन बिटकॉइन उपयोगकर्ताओं के एक डिसेंट्रलाइज्ड नेटवर्क द्वारा किया जाता है, जिसका मतलब है कि इसे कोई व्यक्ति या संस्था नियंत्रित नहीं कर सकती है। देखा जाए तो इस डिजिटल करेंसी के कारण पर्यावरण और जलवायु पर पड़ने वाला भारी दबाव उसके ऊर्जा उपयोग के कारण आता है। शोध के मुताबिक अध्ययन किए गए 20 दिनों में एक से ज्यादा दिनों में इन सिक्कों के कारण होने वाली जलवायु क्षति उत्पादित सिक्कों के मूल्य से अधिक हो गई थी। शोध के मुताबिक यदि 2020 के आधार पर गणना करें तो उस वर्ष में बिटकॉइन माइनिंग ने 75.4 टेरावाट-घंटे प्रति वर्ष के हिसाब से बिजली का उपभोग किया था, जोकि ऑस्ट्रिया और पुर्तगाल जैसे देशों के कुल बिजली उपयोग से भी ज्यादा है। इससे पहले भी जर्नल रिसोर्सेज कंजर्वेशन एंड रीसाइक्लिंग में प्रकाशित एक अध्ययन में बिटकॉइन के कारण बढ़ते इलेक्ट्रॉनिक कचरे को लेकर आगाह किया था। इस शोध के हवाले से पता चला है कि बिटकॉइन के कारण हर साल करीब 30,700 मीट्रिक टन इलेक्ट्रॉनिक कचरा पैदा होता है, जोकि अपने आप में एक बड़ी समस्या है। शोधकर्ताओं के मुताबिक बिटकॉइन के हर एक लेनदेन से करीब 272 ग्राम ई-वेस्ट उत्पन्न होता है, जोकि आई फोन 13 के वजन से भी कहीं ज्यादा है। ऐसे में इन डिजिटल क्रिप्टोकरेंसी के उपयोग को कहीं ज्यादा पर्यावरण और जलवायु अनुकूल बनाने की जरुरत है। इनके लिए कड़े नियम और मानक तय किए जाने चाहिए। जिससे पर्यावरण और जलवायु पर पड़ रहे इनके दबाव को सीमित किया जा सके।

एयर क्वालिटी ट्रैकर- दिल्ली-गाजियाबाद-गुरुग्राम सहित 9 शहरों में खराब हुई वायु गुणवत्ता, 200 से ऊपर रहा सूचकांक

नई दिल्ली। देश के 153 शहरों में गाजियाबाद की हवा सबसे ज्यादा खराब थी जहां प्रदूषण का स्तर 248 दर्ज किया गया, वहीं शिवसागर में हवा सबसे ज्यादा साफ थी केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा 05 अक्टूबर 2022 को जारी रिपोर्ट में कहा गया है कि देश के 153 शहरों में से 48 में हवा %बेहतर% रही, जबकि 60 शहरों की श्रेणी %संतोषजनक%, 36 में %मध्यम% रही। वहीं 9 शहरों बद्दी (229), दिल्ली (211), धारूहेड़ा (215), गाजियाबाद (248), ग्रेटर नोएडा (234), गुरुग्राम (238), खुर्जा (211), नोएडा (215) और पानीपत (221) में वायु गुणवत्ता खराब रही।

यदि दिल्ली-एनसीआर की बात करें तो यहां की वायु गुणवत्ता %खराब% श्रेणी में है। दिल्ली में एयर क्वालिटी इंडेक्स 211 दर्ज किया गया है। दिल्ली के अलावा फरीदाबाद में एयर क्वालिटी इंडेक्स 196, गाजियाबाद में 248, गुरुग्राम में 238, नोएडा में 215 पर पहुंच गया है। देश के अन्य प्रमुख शहरों से जुड़े आंकड़ों को देखें तो मुंबई में वायु गुणवत्ता सूचकांक 75 दर्ज किया गया, जो प्रदूषण के %संतोषजनक% स्तर को दर्शाता है। जबकि कोलकाता में यह इंडेक्स 40, चेन्नई में 129, बैंगलोर में 104, हैदराबाद में 74, जयपुर में 114 और पटना में 43 दर्ज किया गया।

क्या दर्शाता है यह वायु गुणवत्ता सूचकांक, इसे कैसे जा सकता है समझा? देश में वायु प्रदूषण के स्तर और वायु गुणवत्ता की स्थिति को आप इस सूचकांक से समझ सकते हैं जिसके अनुसार यदि हवा साफ है तो उसे इंडेक्स में 0 से 50 के बीच दर्शाया जाता है। इसके बाद वायु गुणवत्ता के संतोषजनक होने की स्थिति तब होती है जब सूचकांक 51 से 100 के बीच होती है। इसी तरह 101-200 का मतलब है कि वायु प्रदूषण का स्तर माध्यम श्रेणी का है, जबकि 201 से 300 की बीच की स्थिति वायु गुणवत्ता की खराब स्थिति को दर्शाती है। वहीं यदि सूचकांक 301 से 400 के बीच दर्ज किया जाता है जैसा दिल्ली में अक्सर होता है तो वायु गुणवत्ता को बेहद खराब की श्रेणी में रखा जाता है। यह वो स्थिति है जब वायु प्रदूषण का यह स्तर स्वास्थ्य को गंभीर और लम्बे समय के लिए नुकसान पहुंचा सकता है। इसके बाद 401 से 500 की केटेगरी आती है जिसमें वायु गुणवत्ता की स्थिति गंभीर बन जाती है। ऐसी स्थिति होने पर वायु गुणवत्ता इतनी खराब हो जाती है कि वो स्वस्थ इंसान को भी नुकसान पहुंचा सकती है, जबकि पहले से ही बीमारियों से जूझ रहे लोगों के लिए तो यह जानलेवा हो सकती है।

पर्यावरण संरक्षण के संदेश के लिए साइकिल रैली

हिमाचल पैडल फॉर पीपल एंड प्लैनेट, पर्यावरण संरक्षण के संदेश के लिए जिला मुख्यालय कुल्लू पीपल फॉर हिमालयन डेवलपमेंट ट्रस्ट द्वारा साइकिल रैली निकाली गई. इस रैली में 52 साइकिल चालकों ने पर्यावरण संरक्षण का संदेश दिया. सुबह ढलपुर से गैमन ब्रिज तक रैली निकाली गई. यह कार्यक्रम गांधी जयंती पर आयोजित किया गया था. रैली को पूर्व जिला परिषद सदस्य प्रेमचंद कटोच ने झंडी दिखाकर रवाना किया. वहीं डॉ. पीडी लाल मौजूद रहे. कार्यक्रम की आयोजक अदिति चंचली ने बताया कि यह कार्यक्रम पर्यावरण संरक्षण, स्वच्छ ऊर्जा के लिए किया गया है. इसमें 52 साइकिल सवारों ने हिस्सा लिया.

पर्यावरण दिवस के मौके पर उनकी ओर से यह कार्यक्रम भी आयोजित किया गया था और अब दूसरी बार इस कार्यक्रम का आयोजन फिर से किया गया है. पर्यावरण संरक्षण आज के समय में बहुत जरूरी है. इसी कड़ी में उनके द्वारा इस तरह के कार्यक्रम किए जा रहे हैं. उन्होंने कहा कि आज के समय में फिर से स्वच्छ ऊर्जा की ओर बढ़ने की जरूरत है. वहीं रैली में शामिल होने पहुंचे सुनील और निखिल ने कहा कि साइकिल चलाना हमारे शारीरिक विकास के लिए जरूरी है. वहीं पर्यावरण संरक्षण के संदेश के लिए आज के समय में साइकिल चलाना बेहद जरूरी है. हिमाचल प्रदेश में कई ऐसे साइकिल ट्रैक हैं, जहां हम साइकिलिंग कर सकते हैं. इस दौरान स्नो लैंड स्काउट एंड गाइड्स ओपन ग्रुप के ट्रस्टी दिव्या वर्मा, नैना, उस्मान, गुरचरण, रेंजर अंजलि, रोवर ऋतंजय हांडा, भरत कुमार, श्रवण, जय सिंह, अक्षत मौजूद रहे.

प्रशांत महासागर दुनिया का सबसे बड़ा महाद्वीप बनाने के लिए है तैयार

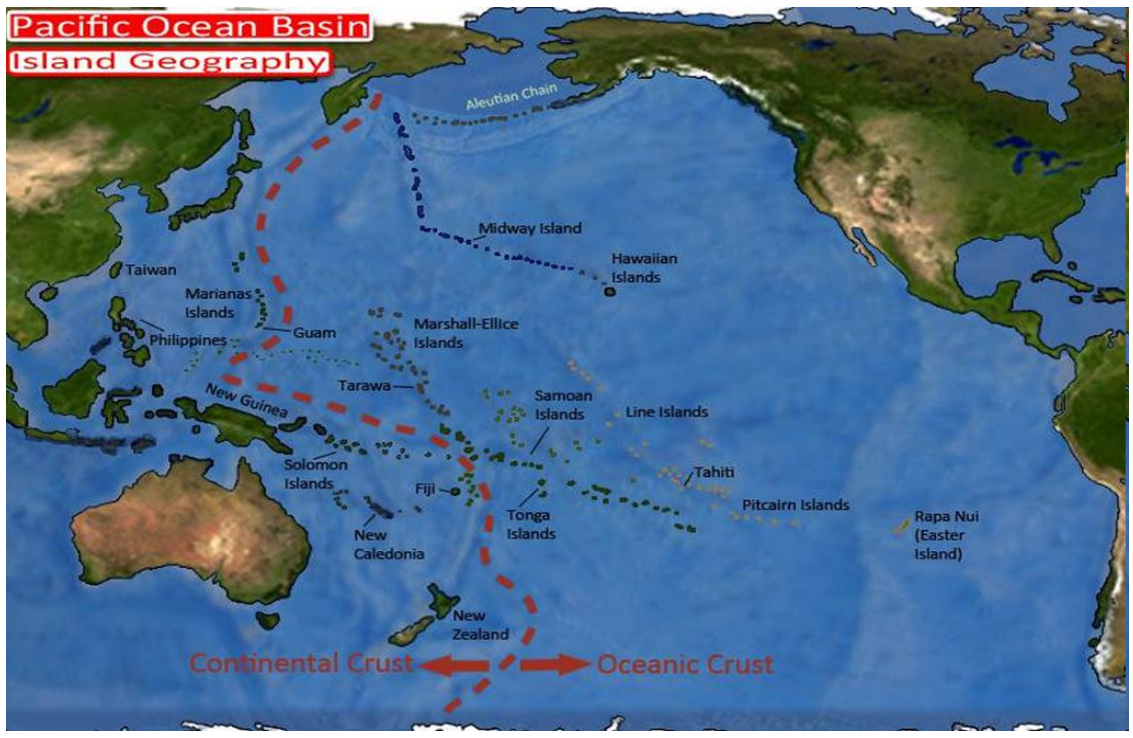

नई दिल्ली। एक नए शोध में पाया गया है कि दुनिया का अगला सबसे बड़ा महाद्वीप, सुपरकॉन्टिनेंट या अमासिया बनने के सबसे अधिक आसार हैं। यह तब बनेगा जब प्रशांत महासागर 20 से 30 करोड़ वर्षों में पूरी तरह बंद हो जाएगा। यह शोध ऑस्ट्रेलिया की न्यू कर्टिन यूनिवर्सिटी के नेतृत्व में किया गया है।

ऑर्थोवर्जन के पूर्वानुमान के अनुसार आर्कटिक महासागर और कैरेबियन सागर के बंद होकर अमेरिका और एशिया को मिलाने के लिए जाना जाने वाला, भविष्य का सबसे बड़ा महाद्वीप या अमासिया कह लाएगा।

शोध टीम ने एक सुपरकंप्यूटर का उपयोग यह सिमुलेट करने के लिए किया कि एक सबसे बड़ा महाद्वीप कैसे बनता है। शोधकर्ताओं ने पाया कि क्योंकि पृथ्वी अरबों वर्षों से ठंडी हो रही है, महासागरों के नीचे प्लेटों की मोटाई और ताकत समय के साथ कम हो जाती है, जिससे अटलांटिक या भारतीय महासागरों जैसे नए या युवा महासागरों को बंद करके आपस में जुड़ना अगले सबसे बड़े महाद्वीप के लिए मुश्किल हो सकता है। कर्टिन के अर्थ डायनेमिक्स रिसर्च ग्रुप और स्कूल ऑफ अर्थ एंड प्लैनेटरी साइंसेज के प्रमुख डॉ चुआन हुआंग ने कहा कि नए निष्कर्ष महत्वपूर्ण हैं और यह अगले 20 करोड़ वर्षों में पृथ्वी के साथ क्या होगा, इसके बारे में जानकारी प्रदान करते हैं।

डॉ हुआंग ने कहा कि पिछले 2 अरब वर्षों में, पृथ्वी के महाद्वीप हर 60 करोड़ वर्षों में एक सबसे बड़ा महाद्वीप बनाने के लिए एक साथ टकराए, जिसे सुपरकॉन्टिनेंट चक्र के रूप में जाना जाता है। इसका मतलब है कि वर्तमान महाद्वीप कुछ 10 करोड़ वर्षों के समय में फिर से एक साथ आने वाले हैं। परिणाम स्वरूप नए सबसे बड़े महाद्वीप को पहले से ही अमासिया नाम दिया गया है, क्योंकि कुछ का मानना है कि जब अमेरिका एशिया से टकराएगा तो प्रशांत महासागर बंद हो जाएगा (अटलांटिक और भारतीय महासागरों के विपरीत)। ऑस्ट्रेलिया से भी इस महत्वपूर्ण घटना में भूमिका निभाने के आसार हैं, ये पहले प्रशांत महासागर के बंद होने के बाद एशिया से टकराते हैं और फिर अमेरिका और एशिया को जोड़ते हैं। एक सुपर कंप्यूटर का उपयोग किया गया जिससे पता चला कि पृथ्वी की टेक्टोनिक प्लेटे और अधिक विकसित हो सकती है। उन्होंने बताया कि हम यह दिखाने में सफल रहे कि 30 करोड़ से कम वर्षों में इस घटना के प्रशांत महासागर में होने का अनुमान है, जो अमासिया के गठन करने में मदद करेगा।

प्रशांत महासागर वह है जो पंथलासा बहुत बड़ा महासागर से बचा है जो 70 करोड़ वर्ष पहले बनना शुरू हुआ था जब पिछला सबसे बड़ा महाद्वीप अलग होना शुरू हुआ था। यह पृथ्वी पर हमारे पास सबसे पुराना महासागर है और यह डायनासोर के समय से अपने सबसे बड़े आकार से सिकुड़ने लगा है। यह वर्तमान में प्रति वर्ष कुछ सेंटीमीटर आकार में सिकुड़ रहा है और इसके लगभग 10 हजार किलोमीटर के वर्तमान आयाम को बंद होने में 20 से 30 करोड़ वर्ष लगने का अनुमान है। झेंग-जियांग ली, कर्टिन स्कूल ऑफ अर्थ एंड प्लेनेटरी साइंसेज के प्रोफेसर और सह-अध्ययनकर्ता जॉन कर्टिन ने कहा कि एक ही महाद्वीपीय द्रव्यमान पर पूरी दुनिया का प्रभुत्व होने से पृथ्वी के पारिस्थितिकी तंत्र और पर्यावरण में नाटकीय रूप से बदलाव आएगा। प्रोफेसर ली ने कहा पृथ्वी जैसा कि हम जानते हैं कि जब अमासिया बनेगा तो यह काफी अलग होगा। समुद्र का स्तर कम होने की उम्मीद है और सबसे बड़ा महाद्वीप का विशाल आंतरिक भाग हर दिन का बहुत अधिक तापमान के साथ यह बहुत शुष्क होगा। वर्तमान में, पृथ्वी में व्यापक रूप से भिन्न पारिस्थितिक तंत्र और मानव संस्कृतियों के साथ सात महाद्वीप हैं, इसलिए यह सोचना आकर्षक होगा कि 20 से 30 करोड़ वर्षों के समय में दुनिया कैसी दिखेगी। यह शोध नेशनल साइंस रिव्यू में प्रकाशित हुआ है।

साभार - डाउन टू अर्थ

गरीब देशों के घरों में खाना पकाते वक्त 22 प्रतिशत तक बढ़ जाता है सीओ2 का स्तर-अध्ययन

मुंबई। वैज्ञानिकों ने कहा कि विकासशील देशों में खाना पकाने के दौरान अन्य लोगों को अनावश्यक रूप से रसोई घर में नहीं रहना चाहिए। बच्चों और वृद्धों को रसोई से बाहर रखना चाहिए ताकि वायु प्रदूषण से होने वाले खतरों से उन्हें बचाया जा सके। यह सुझाव सरे विश्वविद्यालय द्वारा किए गए एक अध्ययन में दिया गया है।

सरे विश्वविद्यालय के ग्लोबल सेंटर फॉर क्लीन एयर रिसर्च (जीसीएआरई) के शोधकर्ताओं ने स्वच्छ ईंधन और बिजली के उपकरणों के उपयोग के फायदों पर प्रकाश डाला है। ये प्रदूषणकारी ईंधन के उपयोग की तुलना में रसोई के भीतर कार्बन डाइऑक्साइड (सीओ2) के स्तर को 32 प्रतिशत से अधिक कम करने में मदद करते हैं। सरे विश्वविद्यालय के प्रमुख अध्ययनकर्ता और जीसीएआरई के संस्थापक प्रोफेसर प्रशांत कुमार ने कहा कि हमारी कुछ सिफारिशें अध्ययन किए गए देशों में कम आय वाले परिवारों के लिए कम व्यवहारिक हो सकती हैं। लेकिन हमने सरकारों को सीधे टिकाऊ और अधिक असर डालने वाले सुझावों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया है, जिससे लोगों को जानकारी साझा कर जागरूक किया जा सकता है। उन्होंने कहा कि हम आशा करते हैं कि इनमें से कई देशों में निर्णय लेने वाले अब रसोई में खाना पकाने और सुरक्षित आदतों के लिए स्वच्छ ईंधन को बढ़ावा देने का आधारभूत कार्य शुरू करेंगे। कार्बन डाइऑक्साइड के संपर्क में आने, वेंटिलेशन और गर्मी से आराम के लिए एशिया, दक्षिण अमेरिका, मध्य पूर्व और अफ्रीका में 60 कम आय वाले देशों की रसोई की निगरानी करने वाला यह पहला अध्ययन है। अध्ययन में शामिल क्षेत्रों में ढाका (बांग्लादेश), चेन्नई (भारत), नानजिंग (चीन), मेडेलिन (कोलंबिया), साओ पाउलो (ब्राजील), काहिरा (मिस्र), सुलेमानिया (इराक), अदीस अबाबा (इथियोपिया), ब्लैंटायर (मलावी), नैरोबी (केन्या), अकुर (नाइजीरिया) और दार-एस-सलाम (तंजानिया) शामिल थे। जीसीएआरई के शोधकर्ताओं और उनके सहयोगियों ने पाया कि जिन रसोई में खाना पकाने के दौरान नियमित रूप से दो से अधिक लोग मौजूद थे, उनमें कार्बन डाइऑक्साइड का स्तर अधिक था। टीम ने पाया कि खाना पकाने से 60 घरों में कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर में औसतन 22 प्रतिशत की वृद्धि हुई। जिन घरों की रसोई में दरवाजे और खिड़कियां खुली हुई थी, जिसमें खाना पकाने के दौरान एक्स्ट्रेक्टर पंखे का भी उपयोग किया गया था, वहां गर्मी से आराम वाला वातावरण पाया गया था। खाना पकाने के दौरान रसोई के दरवाजे और खिड़कियां दोनों खुले होने से कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर को 14 प्रतिशत तक कम करने में मदद मिली। साओ पाउलो विश्वविद्यालय के सह-अध्ययनकर्ता प्रोफेसर मारिया डी फातिमा एंड्रेड ने कहा, मेरा मानना ??है कि यह अध्ययन महिलाओं के अधिकारों के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि इन क्षेत्रों में खाना पकाने में शामिल अधिकांश महिलाएं और उनके बच्चे हैं। यह महत्वपूर्ण है कि स्वास्थ्य को होने वाले इन गंभीर खतरों से लोगों को बेहतर तरीके अपनाने का सुझाव दिया जाए और उन्हें खुद को बचाने के लिए अहम जानकारियां साझा की जाए ।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादकः डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008